88

आपका निर्णय ज़्या है?

यीशु के मुकदमे,[1] एक निकट दृष्टि

हम में से वे लोग जिनका उद्धार यीशु के लहू द्वारा हुआ है, उसके क्रूस को मिली-जुली भावनाओं से देखते हैं अर्थात उसके कष्ट के लिए हम दुखी होते हैं और अपने उद्धार के लिए प्रसन्न। पहली शताब्दी में, आम लोग क्रूस में केवल कष्ट और अपमान ही देखते थे (देखें 1 कुरिन्थियों 1:18; गलातियों 3:13; इब्रानियों 12:2)। आरम्भिक सुसमाचार प्रचारकों के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक इस विचार के प्रति मन में बैठी पूर्वधारणा थी कि रोमी क्रूस पर मरने वाला व्यक्ति उद्धारकर्त्ता कैसे हो सकता है। पौलुस ने इस चुनौती के बारे में लिखा: ''... हम तो उस क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह का प्रचार करते हैं, जो यहूदियों के निकट ठोकर का कारण, और अन्यजातियों के निकट मूर्खता है'' (1 कुरिन्थियों 1:23)।

यह बात कि यीशु एक अपराधी की तरह मरा, आज भी कुछ लोगों के लिए विश्वास में रुकावट है। मसीहियत के विरोधी इस बात की ओर ध्यान दिलाते हैं कि यहूदियों और रोमियों, दोनों ने यीशु को मृत्यु दण्ड दिया। वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि यह सोचना ही बेतुका है कि अपने समय के धार्मिक और राजनैतिक संगठनों द्वारा दोषी ठहराया गया व्यक्ति जगत का उद्धारकर्त्ता हो सकता है। इन आपत्तियों का जवाब देने के लिए हमें इस बात की स्पष्ट समझ होनी आवश्यक है कि मसीह के मुकदमों के समय क्या हुआ।[2] हमें यह समझना आवश्यक है कि एक निर्दोष व्यक्ति को मृत्यु का दण्ड देना कैसे सम्भव था।

इस प्रवचन में हम यीशु के यहूदी और रोमी मुकदमों के विशेष पहलुओं पर ध्यान देंगे:[3] हम प्रभु पर मुकदमा करने वालों की मंशा पर विचार करेंगे। हम गैरकानूनी तरीकों की ओर ध्यान देंगे। हम देखेंगे कि मुकदमों से यह साबित करने के बजाय कि यीशु परमेश्वर का पुत्र नहीं है, उन्होंने यह साबित किया कि वह है। प्रवचन के अन्त से पहले, हम वर्तमान के लिए प्रासंगिकता बनाएंगे: यीशु पर आज भी कई लोगों के मनों में ''मुकदमा'' चल रहा है। हो सकता है कि अभी भी उस पर आपके मन में मुकदमा चल रहा हो; हो सकता है कि आपने अभी निर्णय नहीं लिया है कि आप उस पर क्या विश्वास करेंगे। आपको *अपना* निर्णय देने की चुनौती दी जाएगी कि वह दोषी है या निर्दोष? वह अपराधी था या मसीह? वह कानून तोड़ने वाला था या आपका प्रभु?

पहली सदी में यीशु पर मुकदमा

पूर्वधारणा हावी रहती है (महासभा)

आइए महासभा के सामने यीशु पर ''मुकदमे'' से आरम्भ करते हैं। यहूदी अगुवे न्याय नहीं, बल्कि न्यायोचित होना तलाश रहे थे अर्थात वे कई सप्ताह पहले लिए गए अपने निर्णय को उचित ठहराने का रास्ता ढूंढ़ रहे थे (यूहन्ना 11:47-53, 57)। ''हार्वर्ड[4] के एक प्रोफेसर और प्रसिद्ध अमेरिकी कानूनविद [साइमन] ग्रीनलीफ़ (1846) ने [यहूदियों द्वारा] यीशु के साथ व्यवहार को कानूनी दण्ड की आड़ में हत्या की साज़िश माना।''[5]

हमें भी, जिन्हें कानूनी प्रक्रियाओं की बहुत कम जानकारी है, यह स्पष्ट होना चाहिए कि यीशु का यहूदी ''मुकदमा'' एक दिखावा था। मत्ती ने कायफ़ा और उसके साथियों के पूर्वाग्रह का भण्डाफोड़ किया है: ''महायाजक और सारी महासभा यीशु को मार डालने के लिए उसके विरोध में झूठी गवाही की खोज में थे। परन्तु बहुत से झूठे गवाहों के आने पर भी न पाई'' (मत्ती 26:59, 60क)। झूठी गवाही देने के बारे में मूसा की व्यवस्था बिल्कुल स्पष्ट थी (निर्गमन 20:16; देखें व्यवस्थाविवरण 19:15-21)।

महासभा की बेईमानी मसीह को पिलातुस के सामने लाने के उनके ढंग से स्पष्ट हो जाती है। परमेश्वर की निंदा के धार्मिक आरोप को बदलकर (मत्ती 26:65, 66) उन्होंने राजद्रोह का राजनैतिक आरोप लगा दिया (लूका 23:2)। इसके अलावा पिलातुस को बताए गए आरोपों के बारे में यहूदी मुकदमे में कोई सफ़ाई नहीं दी गई। पूरे रोमी मुकदमे के दौरान (जिस पर आगे चर्चा की जाएगी) सभा का व्यवहार परस्पर विरोधी रहा:

- उन्होंने यीशु पर परमेश्वर की निंदा का आरोप लगाया और फिर अपनी बातों से इस बात का इनकार किया कि यहोवा उनका राजा है (देखें यूहन्ना 19:15)-जो स्वयं परमेश्वर की निंदा करना है।
- उन्होंने यीशु पर दंगा भड़काने वाला होने का आरोप लगाया (देखें लूका 23:5), और फिर पिलातुस पर दबाव डालने के लिए दंगा भड़काया (मत्ती 27:24)।
- उन्होंने कहा कि यीशु को छोड़ा नहीं जाना चाहिए, क्योंकि वह राजद्रोह का दोषी है (लूका 23:2), और स्वयं राजद्रोह के दोषी एक व्यक्ति को छोड़ने की मांग की (मरकुस 15:7, 11)।

परन्तु इस बात को समझें कि समस्या यहूदी व्यवस्था के प्रबन्ध की नहीं थी; दोष उन लोगों के मनों में था जो उस निर्णायक शुक्रवार के दिन व्यवस्था को चला रहे थे। यहूदी न्यायिक प्रबन्ध को संसार में सबसे अधिक मानवीय माना गया है। एक इस्राएली का जीवन इतना मूल्यवान माना जाता था कि उस जीवन को बचाने के लिए हर कानूनी सावधानी बरती जाती थी, चाहे उसने कितना भी बड़ा अपराध क्यों न किया हो। दूसरी शताब्दी में, यहूदी कानूनी प्रबन्धों के बारे में मौखिक परम्पराएं *द मिशनाह* नामक पुस्तक में लिखी गईं।[6] यीशु पर

मुकदमा होने के समय कौन से नियम लागू थे, इस पर कुछ विवाद है, पर बहुत से लोगों का मानना है कि उस समय कानूनी सुरक्षा में कम से कम निम्नलिखित बातें अवश्य थीं:

- मृत्युदण्ड से सम्बन्धित मामलों के मुकदमे केवल दिन में ही निपटाए जाते थे (*मिशनाह,* सनहेद्रिन 4.1)। यह अस्पष्ट न्याय से बचने के लिए था।
- न्यायाधीशों के लिए आरोपी को छोड़ने का रास्ता निकालना आवश्यक था, न कि उसे दोषी ठहराने का तरीका ढूंढ़ना (देखें *मिशनाह,* सनहेद्रिन 4.1; 4.5; 5.4)।
- मृत्युदण्ड के मामले में एक मत से दिए गए वोट दण्ड को व्यर्थ कर देते हैं (मिशनाह, *सनहेद्रिन* 4.1)। एक मत से दिए गए वोट तर्कसंगत लोगों के समूह के निर्णय के बजाय भीड़ के कार्य का संकेत हो सकते थे।
- सभा किसी में दोष ढूंढ़कर उसे उसी दिन दण्ड नहीं दे सकती थी (मिशनाह, सनहेद्रिन 4.1; 5.5)। उन्हें घर जाकर लिए गए निर्णय पर विचार करना आवश्यक होता था।
- महायाजक, जो सभा की प्रधानगी करता था, मामले के सम्बन्ध में अपना विचार नहीं दे सकता था, क्योंकि उसका प्रभाव इतना अधिक था कि इससे दूसरे सदस्य प्रभावित हो सकते थे (देखें *मिशनाह,* सनहेद्रिन, 4.2)।[7]

यीशु के यहूदी ''मुकदमे'' में इन सभी मूल आज्ञाओं का उल्लंघन हुआ:

- उस पर रात के समय मुकदमा चलाकर उसे दोषी पाया गया (मत्ती 26:57, 66; 27:1)।
- न्याय करने वालों की दिलचस्पी उसे निर्दोष साबित करने में नहीं थी, बल्कि केवल उसमें दोष निकालने में थी (मत्ती 26:59)।
- यीशु के विरुद्ध सभा का मत स्पष्टतया एकमत था (मरकुस 14:64; लूका 22:70, 71; देखें मत्ती 27:1; मरकुस 15:1; लूका 23:1)।[8]
- निर्णय और दण्ड एक ही रात में दिए गए थे (मत्ती 26:65, 66; 27:1)।
- महायाजक ने निर्णय देने के बाद दूसरों को इसकी पुष्टि करने के लिए कहा (मत्ती 26:65, 66)।

यीशु के यहूदी मुकदमे के बाइबल विवरणों को विश्वसनीय मान लिया जाए[9] तो कोई संदेह नहीं रहेगा कि अनियमितताएं हुईं[10]–केवल यही पता नहीं चलेगा कि कितनी अनियमितताएं हुईं[11] ,बल्कि उनके अलावा जिनका वर्णन किया गया है, अन्य बातें भी इस सूची में जोड़ी जा सकती हैं:[12]

- मुकदमा महायाजक के घर में गलत ढंग से हुआ (*मिशनाह,* सनहेद्रिन 11:2)।
- मुकदमा पर्व के दिन हुआ (*मिशनाह,* सनहेद्रिन 4:1)।

- यीशु पर इस आधार पर आरोप लगाया गया था कि उसने परमेश्वर की निंदा की है, पर उसकी बात ''परमेश्वर की निंदा'' के यहूदी व्यवस्था के मापदण्ड से मेल नहीं खाती थी। कानूनी सुरक्षा पाने के लिए, रब्बियों ने बाल की खाल निकालकर अर्थ निकाला था। व्यवस्था के अनुसार ''परमेश्वर की निंदा'' का अर्थ परमेश्वर को शाप देना था (लैव्यव्यवस्था 24:15, 16); रब्बियों के अनुसार, परमेश्वर की निंदा करने वाला तभी दोषी होता था यदि उसने परमेश्वर के नाम को व्यर्थ लिया हो (*मिशनाह,* सनहेद्रिन 7:5)।

मैं फिर कहता हूं कि समस्या यहूदी कानूनी प्रबन्ध की नहीं थी, बल्कि इसे चलाने वाले लोगों की थी। यहूदियों ने यीशु पर मुकदमा चलाकर उसे दोषी नहीं पाया था, बल्कि उन्होंने उसे दोषी पाकर फिर मुकदमा चलाया था। महासभा के सामने यीशु के मुकदमे के सुसमाचार के वृत्तांतों को बिना पक्षपात के पढ़ने पर यही निर्णय दिया जाएगा कि वह ''दोषी नहीं'' है!

राजनीति छाई रहती है: पिलातुस

आइए अब रोमी मुकदमे की ओर बढ़ते हैं। पिलातुस के सामने यीशु का मुकदमा रोमी न्यायपद्धति में वैध ढंग से शुरू हुआ। रोमी साम्राज्य में न्याय को महत्व दिया जाता था; ''रोम का नियम था, 'चाहे आसमान टूट पड़े, न्याय अवश्य होना चाहिए!' ''[13] ऐसे मामलों के जानकार हमें बताते हैं कि ''पिलातुस के सामने यीशु के मुकदमे में राज्यपाल की *cognitio* (जांच) से सामान्य क्षेत्रीय मुकदमे की लगभग सभी बातें थीं।''[14]

ढंग यह होता था:

- मुकदमे की ज़िम्मेदारी राज्यपाल की थी; कोई न्यायमण्डल नहीं था।
- राज्यपाल आरोप सुनता था।
- राज्यपाल आरोपी से पूछताछ करता था।
- आवश्यकता पड़ने पर राज्यपाल सलाहकारों से पूछता था।
- जांच के बाद, राज्यपाल न्याय की गद्दी पर बैठकर निर्णय देता था। ''रोमी कानून के अनुसार न्यायाधीश के लिए मृत्यु दण्ड की घोषणा न्याय की गद्दी पर बैठकर करना आवश्यक था।''[15]

आरम्भिक चरणों में, यीशु का रोमी मुकदमा इस प्रकार हुआ:

- यीशु को पिलातुस के सुपुर्द किया गया (मत्ती 27:2; मरकुस 15:1; लूका 23:1); मुकदमे की ज़िम्मेदारी पूरी तरह से राज्यपाल पर थी।
- यहूदी अगुओं ने पिलातुस के सामने आरोप लगाए (यूहन्ना 18:29, 30; लूका 23:2)।
- पिलातुस ने यीशु की जांच की (मत्ती 27:11; मरकुस 15:2; लूका 23:3;

यूहन्ना 18:33-38)।

- यीशु को हेरोदेस के पास भेजने के पिलातुस के काम को किसी दूसरे से विचार लेने के रूप में कहा जा सकता है (देखें लूका 23:15)।
- न्याय की गद्दी का वर्णन कई बार हुआ है (मत्ती 27:19; यूहन्ना 19:13); पिलातुस ने रोम के आधिकारिक प्रतिनिधि के रूप में बात की। ''[न्याय की गद्दी पर] बैठने पर पुन्तियुस पिलातुस रोम ही *था।* ''[16]

समस्या यह नहीं थी कि पिलातुस ने नियम के अनुसार काम नहीं किया। समस्या यह थी कि निर्णय देने के बाद, वह इस पर कायम नहीं रहा। यीशु से पूछने के बाद, उसने आरोप लगाने वालों के पास वापस जाकर घोषणा कर दी, ''मैं इस मनुष्य में कोई दोष नहीं पाता'' (लूका 23:4; देखें आयत 14)। यहां इस कारण उसे यीशु को छोड़ देना चाहिए था,[17] पर उसने नहीं छोड़ा।

मुकदमे के दौरान, पिलातुस ने बार-बार यीशु को ''दोषी नहीं!'' कहा:[18]

> ''मैं इस मुनष्य में कोई दोष नहीं पाता'' (लूका 23:4)।
>
> ''... जिन बातों का तुम उस पर दोष लगाते हो, उन बातों के विषय में मैंने उस में कुछ दोष नहीं पाया है'' (लूका 23:14)।
>
> उस ने तीसरी बार उन से कहा; ... उस ने कौन सी बुराई की है? मैं ने उस में मृत्यु के दण्ड के योग्य कोई बात नहीं पाई! ... (लूका 23:22)।
>
> पिलातुस ... फिर यहूदियों के पास निकल गया और उन से कहा, मैं तो उस में कुछ दोष नहीं पाता (यूहन्ना 18:38)।
>
> पिलातुस ने फिर बाहर निकलकर लोगों से कहा, देखो, मैं उसे तुम्हारे पास फिर बाहर लाता हूं; ताकि तुम जानो कि मैं कुछ भी दोष नहीं पाता (यूहन्ना 19:4)।
>
> पिलातुस ने उन से कहा, ... मैं उस में दोष नहीं पाता (यूहन्ना 19:6ख)

न्याय का मूल सिद्धान्त ''दोहरी आशंका'' को रोकना है।[19] ''दोहरी आशंका'' से सम्बन्धित नियम कहता है कि किसी व्यक्ति पर एक अपराध के लिए दूसरी बार मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। पिलातुस के सामने यीशु के मुकदमे में, उसे न केवल *दोहरा* जोखिम, बल्कि ''*तीहरा* जोखिम'' और इससे भी बढ़कर उठाना पड़ा था।

पिलातुस द्वारा ''दोषी नहीं'' के अपने पहले निर्णय को काबू न कर पाने से ही, कार्यवाहियों में न्याय नहीं रहा था। राज्यपाल को मालूम था कि महासभा यीशु को मरा हुआ

देखना चाहती है (मत्ती 27:18; मरकुस 15:10), पर उसने फिर भी उसे छोड़ा नहीं। वह जानता था कि मसीह निर्दोष है, पर फिर भी उसने उसे कोड़े मरवा दिए। वह जानता था कि यीशु ने मृत्युदण्ड के योग्य कोई काम नहीं किया है, पर उसने उसे क्रूस पर चढ़ाने के लिए दे दिया।

पितालुस ने जो किया वह इसलिए किया था, क्योंकि इसमें उसका राजनैतिक हित था[20] पर इससे उसने वह नहीं किया जो उचित था। यहूदियों के दबाव में ''यीशु को जल्दी-जल्दी एक से दूसरे अधिकारी के पास भेजा गया''[21] जब तक अन्त में, पिलातुस ने उसे ''क्रूस पर चढ़ाए'' जाने के लिए दे न दिया (मत्ती 27:26)।

यीशु को पिलातुस द्वारा मुकदमा चलाकर दोषी *नहीं* पाया गया था, बल्कि रोमी राज्यपाल ने तो बार-बार उसे निर्दोष करार दिया था। पूरे मुकदमों तथा बाद की घटनाओं में, यीशु के सम्पर्क में आने वाले सभी लोग जानते थे कि वह निर्दोष है।[22] पिलातुस जानता था कि वह निर्दोष है। पिलातुस की पत्नी को पता था कि वह निर्दोष है (मत्ती 27:19)। हेरोदेस जानता था कि वह निर्दोष है (लूका 23:15)। यहूदा को, जिसने उसे पकड़वाया था, पता था कि वह निर्दोष है (मत्ती 27:4)। यीशु के साथ क्रूस पर चढ़ने वाला डाकू जानता था कि वह निर्दोष है (लूका 23:41)। यहां तक कि क्रूस पर चढ़ाने वालों पर इंचार्ज, सूबेदार जानता था कि वह निर्दोष है (मत्ती 27:54; मरकुस 15:39)।

इक्कीसवीं शताब्दी में यीशु पर मुकदमा

आइए पहली शताब्दी से इक्कीसवीं शताब्दी में आते हैं। हमने यीशु के बारे में दूसरों के निर्णय देखे हैं, पर अब मैं आपसे पूछना चाहता हूं, ''*आपका* निर्णय क्या है?'' जल्दबाजी में उत्तर न दें। पहले अपने निर्णय के महत्व को समझ लें।

मैं किसी के अपनी बात के अर्थ को समझे बिना, यह उत्तर देने की कल्पना कर सकता हूं, ''मेरा निर्णय है कि वह निर्दोष है! यीशु मृत्यु दण्ड का दोषी नहीं था।'' आप यीशु को ''दोषी नहीं'' कहते नहीं रह सकते जब तक आप उसे परमेश्वर का पुत्र और अपने जीवन का प्रभु नहीं मानते।

मैं यह दावा क्यों करता हूं? विचार करें कि यहूदियों और रोमियों द्वारा यीशु को दण्ड क्यों दिया गया था। यहूदी अगुओं का दावा था कि यीशु यह मानकर कि वह परमेश्वर का पुत्र है, परमेश्वर की निंदा करने का दोषी था (मत्ती 26:63-66)। यीशु की ईश्वरीयता को न मानने को तैयार, उन्होंने उसे ''दोषी करार'' दे दिया। पिलातुस के सामने लगाया गया आरोप यह था कि यीशु ने राजा होने का दावा किया है (लूका 23:2), जो ऐसा आरोप था जिसका उसने इनकार नहीं किया (मत्ती 27:11)। जिस ''अपराध'' के लिए यीशु को रोमी क्रूस पर चढ़ाया गया, वह यह था कि उसने अपने आप को यहूदियों का राजा बनाया था (देखें यूहन्ना 19:19-22)। यीशु के शत्रुओं ने उस दावे को ईश्वरीय होने से इनकार कर दिया; उनकी नज़र में वह केवल एक गड़बड़ फैलाने वाला व्यक्ति था, जो मरने के योग्य था।

इस सब को ध्यान में रखते हुए, मैं आपसे पूछता हूं, ''*आपका* क्या निर्णय है?'' क्या

आप मानते हैं कि परमेश्वर का पुत्र होने का दावा कर यीशु परमेश्वर की निंदा करने का दोषी था या आप उसे परमेश्वर का ईश्वरीय पुत्र मानने को तैयार हैं ? क्या आप मानते हैं कि यीशु राजनैतिक अव्यवस्था या विद्रोह को भड़काने का दोषी था या आप उसे आत्मिक ''राजाओं का राजा और प्रभुओं का प्रभु'' (प्रकाशितवाक्य 19:16) मानकर ग्रहण करने को तैयार हैं ? क्या आप उसके अधीन होने, उसकी इच्छा के आगे समर्पण करने को तैयार हैं, चाहे जो भी हो जाए (लूका 6:46) ? मैं दोहराता हूं कि बिना उसे परमेश्वर का पुत्र और अपने जीवन का प्रभु माने, आप उसे ''निर्दोष नहीं'' नहीं कह सकते।

यीशु को रोमी क्रूस पर अपने जीवन में किए किसी पाप के कारण नहीं चढ़ाया गया था, बल्कि दूसरों द्वारा किए गए पाप के कारण चढ़ाया गया था।[23] उस बहुत पुराने शुक्रवार के दिन न्याय को द्वेष, अज्ञानता और समझौते से दबा दिया गया था (देखें मत्ती 27:18; प्रेरितों 3:17; मरकुस 15:15)। यह तथा इससे जुड़े दूसरे व्यवहार लोगों को यीशु को वह मानने से, जो वह वास्तव में है, रोके रखते हैं। कुछ लोगों के मन में यीशु के बारे में वही बातें हैं, जो उन्होंने किसी दूसरे से सुनी हैं। दूसरे केवल पवित्र शास्त्र में उसके बारे में बताई गई बातों से अनजान रहकर ऐसा करते हैं। बहुत से लोग पिलातुस की तरह उसके पक्ष में होने से डरते हैं, क्योंकि वे ''भीड़ को प्रसन्न करने की इच्छा'' रखते हैं (मरकुस 15:15)।

महासभा द्वारा मुकदमा चलाए जाने के समय, यीशु ने सभा की तंग सोच की ओर ध्यान दिलाया था: ''यदि मैं तुम से कहूं [कि मैं मसीह हूं], तो प्रतीति न करोगे और यदि [मैं तुम से] पूछूं, तो उत्तर न दोगे'' (लूका 22:67, 68)। उनकी यीशु के दावों को गम्भीरतापूर्वक जांचने की कोई इच्छा नहीं थी। मेरी प्रार्थना है कि आप उनके जैसे न बनें। निश्चय ही मसीह के जीवन पर हमारा अध्ययन किसी निष्कपट मन को विश्वास दिलाने के लिए काफ़ी है कि यीशु वही है, जो होने का उसने दावा किया था।[24] यदि आपने अभी तक यीशु में अपने विश्वास का अंगीकार नहीं किया है, तो मेरी आशा और प्रार्थना है कि आज ही उसके बारे में आपका निर्णय ''दोषी नहीं हो जाए क्योंकि पूरे मन से मेरा विश्वास है कि यीशु ही मसीह, जीवते परमेश्वर का पुत्र है!'' (देखें मत्ती 16:16)।

सारांश

हमने प्रश्न पूछा है कि ''आप यीशु के साथ क्या करोगे ?'' निर्णय अब आपको देना है। अल्बर्ट सिम्पसन ने लिखा है:

मित्रहीन, त्यागा हुआ और सबके द्वारा धोखा दिया गया;
यीशु पिलातुस के दरबार में खड़ा है,
सुनो! अचानक पुकार का यह अर्थ है;
आप यीशु के साथ क्या करोगे
यीशु आज भी मुकदमे के लिए खड़ा है,
चाहें तो आप उससे मुकर सकते हैं;

अच्छे या बुरे वक्त आप उसके वफ़ादार हो सकते हैं;
आप यीशु के साथ क्या करोगे?

क्या आप पिलातुस की तरह उससे बचने की कोशिश करेंगे
या जो भी हो जाए, उसे ही चुनेंगे?
उससे छिपने का कोई लाभ नहीं होगा,
आप यीशु के साथ क्या करोगे?

मेरे मित्र, आप यीशु के साथ क्या करोगे?
तटस्थ आप रह नहीं सकते :
अरे मित्र, एक दिन आपका मन आप से पूछेगा,
''वह मेरे साथ क्या करेगा''[25]

यहूदियों और पिलातुस ने जो बात नहीं समझी, वह यह थी कि जब यीशु मुकदमे के लिए उनके सामने था, तो उसके सामने उन पर भी मुकदमा था। उन्होंने केवल यीशु को ही दण्ड नहीं दिया, बल्कि अपने निर्णयों से उन्होंने अपने आप को भी दोषी ठहराया। कुछ वर्ष बाद, पिलातुस ने अपना पद गंवा दिया और आत्महत्या कर ली;[26] कुछ दशक बाद, यरूशलेम नगर का विनाश हो गया। यीशु के बारे में आज लिए गए आपके निर्णय से यह तय होगा कि आप अनन्तकाल का समय कहां बिताएंगे (मत्ती 10:32, 33; 2 तीमुथियुस 2:12)। यदि आपने अपने पापों से मन फिराकर, उसमें अपने विश्वास का अंगीकार करके उसकी इच्छा को नहीं माना है तो आज ही मान लें (लूका 13:3; मत्ती 10:32; मरकुस 16:15, 16)!

नोट्स

इस प्रवचन का एक वैकल्पिक शीर्षक ''यीशु पर मुकदमा'' है-यदि आपने पहले ऐसे शीर्षक का इस्तेमाल नहीं किया। आप चाहें तो यीशु के ईश्वरीय होने के प्रमाणों का सार जोड़कर इस प्रवचन को आगे बढ़ा सकते हैं।

टिप्पणियां

[1]इस संदेश के लिए आयतें हैं, मत्ती 26:57, 59-68; 27:1, 2, 11-31क; मरकुस 14:53, 55-65; 15:1-20क; लूका 22:54क, 63-71; 23:1-25; यूहन्ना 18:12-14, 19-24, 28-40; 19:1-16. [2]इन आपत्तियों का उत्तर देने का एक और पहलू यह समझाना है कि हमारा उद्धार लाने के लिए यीशु को *मरना* क्यों आवश्यक था। ''मसीह का जीवन, भाग 7'' में इस पर संक्षेप में बात की जाएगी। [3]यदि इस प्रवचन का इस्तेमाल इन परीक्षाओं को बताने वाले पाठों की पैरवी के लिए नहीं किया जाता, तो परीक्षाओं की समीक्षा करनी चाहिए। [4]हार्वर्ड कानून के अपने कॉलेज के लिए कैम्ब्रिज, मैसाचुएट्स में एक प्रतिष्ठित अमेरिकी यूनिवर्सिटी है। [5]रेमंड ई. ब्राउन, *द डैथ ऑफ़ द मसायाह,* अंक 1 (न्यू यॉर्क: डबलडे, 1994), 330. [6]*द गिमारा* (*द मिशनाह* पर बाद के टीका) के साथ *द मिशनाह* (जिसे ''मिशना'' भी कहा जाता है) मिलकर

द तालमुड बनते हैं, जिससे आज भी यहूदी गतिविधियां नियन्त्रित होती हैं।[7]यह सूची ब्राउन, 358-59, और ब्रूस कोरली, ''ट्रायल ऑफ़ जीज़स,'' *डिक्शनरी ऑफ़ जीज़स एण्ड द गॉस्पल्स,* सम्पादक जोएल बी. ग्रीन एण्ड स्कॉट मैक्नाइट (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटरवर्सिटी प्रैस, 1992), 851 समेत कई स्रोतों का सार है। [8]लूका ने बाद में यह बात बताई कि सभा का एक सदस्य, अरमितिया का यूसुफ ''उनके इस काम से सहमत'' *नहीं* था (लूका 23:51)। शायद यूसुफ कार्यवाही के समय वहां नहीं था या शायद मरकुस और लूका ने ''सब'' शब्द का इस्तेमाल ''अधिकतर लोगों'' के अर्थ में किया। [9]यीशु के यहूदी मुकदमे के नये नियम के वृत्तांतों को कई लोगों द्वारा, जो यह ज़ोर देते हैं कि यहूदी न्यायालय ऐसा अधर्मी काम नहीं कर सकता था, चुनौती दी जाती है। इन विरोध करने वालों को अन्याय की जान-बूझकर की जाने वाली हत्या की जानकारी होनी चाहिए जो ''धार्मिक अदालतों'' द्वारा की जाती है जिससे मनुष्यता के इतिहास पर धब्बा लगता है। मेरा मानना है कि सुसमाचार के वृत्तांतों के लेखक को परमेश्वर की प्रेरणा थी, और इस कारण उन्होंने केवल सच्चाई और सच्चाई ही लिखी। [10]कुछ लोग ''अनियमितताएं'' को प्रार्थमिकता देते हैं, परन्तु ''अन्यायों'' अधिक सही लगता है।

[11]कुछ लोगों का विश्वास है कि कम से कम सत्ताइस अन्याय हुए (कोरली, 851)। [12]इस सूची को बढ़ाया जा सकता था। उदाहरण के लिए, *द मिशनाह* के अनुसार, कोई न्यायाधीश अपने मुकदमे में गवाह नहीं हो सकता था (सनहेड्रिन 5.4), परन्तु महासभा के सदस्य यीशु की कथित ''परमेश्वर की निंदा'' के गवाह भी थे और न्यायी भी (लूका 22:71)। [13]वारेन डब्ल्यू. वियर्सबे, *द बाइबल एक्सपोज़िशन कमैन्ट्री,* अंक 1 (व्हीटन, इलिनोइस: विक्टर बुक्स, 1989), 377. [14]ए. एन. शेरविन-वाइट, ''पाइलेट, पोंटियुस,'' *द इंटरनैशनल स्टैंडर्ड बाइबल इन्साक्लोपीडिया,* संशो., सामा. संस्क. ज्योफ़री डब्ल्यू. ब्रोमिले (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1986), 3:868. [15]कोरली, 849. कोरली ने जर्मनी के थियोडोर मोमसेन द्वारा किए अध्ययन की बात की, जिसे 1902 में साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार मिला था। मोमसेन की सबसे प्रसिद्ध पुस्तक चौबीस अंकों की *हिस्टरी ऑफ़ रोम* है। [16]वाल्टर वांगरिन, जूनियर, *द बुक ऑफ़ गॉड: द बाइबल ऐज़ ए नॉवल* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 1996), 796. [17]कम से कम पिलातुस को चाहिए था कि यीशु को सुरक्षित हिरासत में लेता। [18]लूका और यूहन्ना की कुछ बातें एक-दूसरे से मिलती-जुलती हैं, पर मैंने उन्हें अलग-अलग कर दिया है। [19]''आशंका'' शब्द खतरे का है। परीक्षा के मामले में, इस शब्द का इस्तेमाल आरोपी के खतरे के लिए हुआ है। अमेरिका में, दोहरी आशंका के विरुद्ध संविधान के पांचवें संशोधन में सुरक्षा उपलब्ध कराई गई है। कई देशों में ऐसा ही कानूनी प्रावधान है। [20]आपको चाहिए कि यहूदियों के साथ पिलातुस के कच्चे-पक्के सम्बन्ध की समीक्षा करें।

[21]एच. आई. हेस्टर, *द हार्ट ऑफ़ द न्यू टैस्टामेंट* (लिबर्टी, मिज़ोरी: क्वालिटी प्रैस, 1963), 211. यह तथ्य कि अभी भी प्रात: के लगभग 6 बजे थे, जब पिलातुस ने यीशु को क्रूस पर चढ़ाए जाने के लिए दे दिया (देखें यूहन्ना 19:14 पर नोट्स) संकेत देता है कि पूरी कार्यवाही ही बौखलाहट तथा जल्दबाजी में हुई। [22]यह तथ्य कि उसके शत्रु उसके विरुद्ध ''*झूठी* गवाही'' ढूंढ़ते थे (मत्ती 26:59) इस बात का सबूत है कि उन्हें मालूम था कि कोई *सच्ची* गवाही उस पर दोष लगाने के लिए नहीं मिलेगी। [23]क्योंकि यीशु हमारे पापों के लिए मरा (1 कुरिन्थियों 15:3) वह वास्तव में हमारे द्वारा किए गए सब पापों के कारण क्रूस पर रखा गया था। इस समय, इस प्रवचन में उसके शत्रुओं के पापी होने पर चर्चा करें। [24] आप चाहें तो इस विचार को यीशु के परमेश्वर होने के दावों के योग को बढ़ा सकते हैं। [25]एल्बर्ट सिम्पसन, ''वट विल यू डू विद जीज़स?'' *सॉन्ग्स ऑफ़ फ़ेथ एण्ड प्रेज़,* संकलन व सम्पादन एल्टन एच हॉवर्ड (वैस्टमोनरो, लुईसियाना: हॉवर्ड पब्लिशिंग कं., 1994)। [26]पृष्ठ 182 पर दिए ''पुन्तियुस पिलातुस (और यीशु की मृत्यु)'' नामक अतिरिक्त लेख में इसके बारे में अधिक बात की गई है।